International Journal of Sanskrit Research 2018; 4(4): 168-169

International Journal of Sanskrit Research

अनन्ता

ISSN: 2394-7519
IJSR 2018; 4(4): 166-167
© 2018 IJSR
www.anantaajournal.com
Received: 20-05-2018
Accepted: 25-06-2018

सौरभ
शोधछात्र स्नातकोत्तर संस्कृत विभाग, ल0ना0मि0वि0वि0,दरभंगा, भारत

Correspondence
सौरभ
शोधछात्र स्नातकोत्तर संस्कृत विभाग, ल0ना0मि0वि0वि0,दरभंगा, भारत

श्रीकृष्ण : भारतीय राजनीति के सफल कूटनीतिज्ञ

सौरभ

सारांश
श्रीकृष्ण भारतीय साहित्य और संस्कृति के प्राणभूत हैं। ये सदियों से यहाँ पूजे जाते हैं। इनकी गाथाएँ हम श्रद्धाभाव से सुनते आ रहे हैं। कृष्ण के चरित्र की व्यापकता तथा विविधता को देखकर लोकमानस चकित हो जाता है। इसी विविधता ने उन्हें दशावतार में शामिल कर ईश्वरत्व का अधिकारी बना दिया। लेकिन यदि राजनीतिक और कूटनीतिक दृष्टि से देखा जाए तो श्रीकृष्ण एक सफल राजनीतिज्ञ और कूटनीतिज्ञ साबित होते हैं।

प्रस्तावना
'महाभारत' महाकाव्य में भरतवंश की गाथा वर्णित है। यह भारतीय इतिहास और संस्कृति का अभिन्न अंग है और कोई भी इसको उपेक्षित नहीं कर सकता। इसने भारतीय जनमानस एवं जनभावना में अपनी गहरी पैठ बना ली है। यह समझा जाता है कि महाभारत का युद्ध हस्तानापुर के राज्य के लिए कौरवों और पाण्डवों के बीच लड़ी गई। यह महाकाव्य भारतीय संस्कृति की सम्पन्नता को प्रतिबिम्बित करता है। इसमें धर्म–अर्थ–काम और मोक्ष से संबंधित अनेक प्रश्नों को उठाया गया है तथा उन प्रश्नों के उत्तर यहाँ दिए गए हैं जो यहाँ आचार–व्यवहार के मानदण्ड कायम करते हैं। एक साधारण आदमी भी यहाँ अपने जीवन–लक्ष्यों के बारे में तथा अपने लक्ष्य की प्राप्ति में आनेवाली बाधाओं और उसके निराकरण हेतु उपाय प्राप्त कर सकता है। इस महाकाव्य को यदि गौर से पढ़ा जाए तो यह स्पष्ट होता है इसमें हुआ युद्ध दो स्तरों पर लड़ा गया। पहला भगवान श्रीकृष्ण और शकुनी में नीतिगत स्तर पर और दूसरा युद्धक्षेत्र में सेनाओं के मध्य। यहाँ श्रीकृष्ण का चरित्र एक सफल राजनयिक और कूटनीतिक के रूप में उभरकर सामने आता है। हिन्दू सनातन धर्म में जो दशावतार की अवधारणा है, उन सभी में श्रीकृष्ण का चरित्र एकदम मानवीय लगता है। वे मानवीय गुणों–अवगुणों से युक्त होते हुए देवत्व को प्राप्त करते हैं। उनका चरित्र विविधताओं से भरा हुआ दिखता है। सहजता तो उनके चरित्र की सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण विशेषता है। जितनी सहजता से वे द्वारिकाधीश बन शासन चलाते हैं उतनी ही सहजता से वे गाय भी चराते हैं और अर्जुन का रथ भी चलाते हैं। कंस जैसे दुष्टों को दलन कर जनता को त्रास से मुक्ति भी दिलाते हैं और एक ब्रह्मज्ञानी की तरह अर्जुन को गीता का उपदेश भी देते हैं। इन सबों से ऊपर इनका चरित्र एक सफल कूटनीतिज्ञ के रूप में विशेष रूप से दिखता है। उन्होंने छोटे–छोटे राज्यों में विभाजित तत्कालीन भारत को अपनी कूटनीति के बल पर इन्द्रप्रस्थ के एक झंडे तले एकत्रित कर दिया। लगभग ऐसा ही काम कालान्तर में बिस्मार्क और सरदार पटेल ने भी किया। उनका राजनीति से सीधा सम्बन्ध तभी से है, जब उन्होंने जनता के कल्याण के लिए बचपन में ही पूतना का उद्धार कर, शकटासुर, तृणावर्त इत्यादि जैसे असुरों का वध कर दिया। [1] कंसवध की घटना से श्रीकृष्ण का राजनैतिक व्यक्तित्व तत्कालीन राजनीतिक परिदृश्य में महत्त्वपूर्ण हो गया। उस वक्त भारतवर्ष की राजनीति का केन्द्र मगध था, जिसका राजा जरासंघ था और वह कंस का श्वसुर था। कंस वध का बदला लेने के लिए उसने श्रीकृष्ण पर धावा बोला और लगातार आक्रमण उसने किए। [2] उन आक्रमणों में श्रीकृष्ण पूर्णतः रक्षात्मक रहे और अपनी प्रजा सहित द्वारिका प्रस्थान कर गए। दूरदर्शी श्रीकृष्ण यह समझ गए थे कि भारत की शक्ति का केन्द्र मगध के बजाए अब उत्तर–पश्चिम में केन्द्रित होना चाहिए क्योंकि भविष्य के विदेशी आक्रमणों के लिए उत्तर–पश्चिम ही द्वार होगा और वहाँ एक शक्तिशाली केन्द्र का होना आवश्यक है। श्रीकृष्ण के इस उत्कर्ष को चेदिराज शिशुपाल सह न सका। ईर्ष्या की एक वजह विदर्भराज की पुत्री 'रूक्मिणी' से श्रीकृष्ण का विवाह होना भी था। [3] एक कूटनीतिज्ञ के नाते श्रीकृष्ण ने साम–दाम–दण्ड और भेद इन चारों का यथासमय प्रयोग किया। उन्होंने वैवाहिक सम्बन्धों के द्वारा अपनी राजनीतिक फलक को

विस्तृत किया। [4] चेदिराज शिशुपाल इस नीति–निपुण के आगे तुच्छ ठहरे और राजसूय यज्ञ के अवसर पर अग्रपूजा के विवाद में मारे गए और इस तरह एक और शत्रु का अंत हुआ। [5] देवकीनन्दन श्रीकृष्ण के असाधारण व्यक्तित्व का पता कुरूक्षेत्र के मैदान में चलता है। इससे पूर्व वे युद्ध टालने के लिए दुर्योधन के समीप शान्तिदूत बनकर जाते हैं किन्तु दुर्योधन ने उन्हें युद्ध के लिए ही प्रेरित किया। तदनन्तर उन्होंने युद्ध को स्वीकार तो किया लेकिन युद्ध से पूर्व सामान्यजन के लिए एक विस्मयकारी स्थिति उत्पन्न कर दिया। उन्होंने अपनी सारी सेना दुर्योधन को दे दी और स्वयं निहत्थे अर्जुन के सारथी बने। यहाँ उन्होंने यह साबित कर दिया कि मस्तिष्क की क्षमता हथियारों की क्षमता से अधिक होती है। कूटनीति का पलड़ा शस्त्रों के ऊपर भारी होता है। उन्होंने भेद का भी समुचित प्रयोग किया। वे जानते थे कि विदुर पाण्डवों से प्रेम करते हैं और उनके सद्गुणों से प्रभावित है। इसलिए वे उनसे हस्तिनापुर की गतिविधियों को जानते रहते थे और पाण्डवों को सावधान करते रहते थे। [6] भेद उपाय के द्वारा ही उन्होंने कर्ण को भी युधिष्ठिर के पक्ष में करने का प्रयत्न किया था। कुरूक्षेत्र के युद्ध में जब द्रोणाचार्य के पराक्रम की पराकाष्ठा प्रदर्शित हो रही थी, तो उस समय भी कृष्ण की कूटनीति परिलक्षित होती है। उन्होंने अर्जुन को धर्मभावना को छोड़कर एकमात्र विजय के लिए यत्न करने को कहा। [7] श्रीकृष्ण यह मानते थे कि जब शत्रु प्राणघातक हो जाए तब नीति की राह छोड़ अपनी प्राणरक्षा पर ध्यान देना चाहिए। क्योंकि प्राण के बिना इस पृथ्वी पर सत्य तथा झूठ का कोई अस्तित्व नहीं होता है। जयद्रथ वध के समय भी उन्होंने माया के द्वारा अर्जुन की सहायता की। इस प्रकार ऐसे अनेक उदाहरण है जैसे कर्ण से युद्ध में घटोत्कच को आगे करना, भीष्मवध में शिखण्डी की सहायता लेना, युद्ध से विमुख अर्जुन को कर्मयो की दीक्षा देकर पुनः युद्ध के प्रवृत्त करने इत्यादि जो यह बताते हैं कि श्रीकृष्ण कूटनीति के माहिर खिलाड़ी थे।

निष्कर्षः

महाभारत महाकाव्य में अनेक चरित्रों के प्रणयन हुआ है। लेकिन इसके नायकत्व के अधिकारी श्रीकृष्ण ही है। उन्होंने अपनी राजनीति और कूटनीति के द्वारा साधनविहीन पाण्डवों को कुरू–साम्राज्य के सिंहासन पर अधिष्ठित कर दिया। अपनी नीतिबल से उन्होंने मगध जैसे साम्राज्य को धूल–धूसरित कर दिया और सत्ता का नया केन्द्र निर्मित कर दिया। स्वयं निःशस्त्र होकर भी कई अक्षौहिणी सेना पर भारी पड़े। निश्चित रूप से श्रीकृष्ण की कूटनीति अपराजेय है।

संदर्भ सूचीः

1. श्रीमद्भागवत्–10/6/10, 10/44/37, 10/12/31
2. वही–10/50/7–8
3. वही–10/54/53
4. वही–10/56/44,10/58/31–47
5. वही–10/74/43
6. महाभारत, वनपर्व, अ0–258/276
7. महाभारत, द्रोणपर्व, श्लो9–11